International Journal of Arts & Education Research

ISSN: 2278-9677

Published By:- Society of Scientific Research and Education(SSRE)

Email:-Editor@ijaer.org August 2021 www.ijaer.org

स्वामी विवेकानन्द जी तथा महात्मा गाँधी जी की शैक्षिक विचारधारा का अध्ययन

Rajni Gupta
Research Scholar
Malwanchal University Indore (M.P.)

Dr. Priyanka Gupta
Research Supervisor
Malwanchal University Indore (M.P.)

सार

संसार का प्रत्येक प्राणी जिस भी जाति में जन्म लेता है, उसके मध्य ही अनेक प्राकर की क्रियाये सीखता है। यह क्रियाये केवल परिस्थितियो के साथ समायोजन कर आत्म–रक्षा के कार्यो तक ही सीमित नहीं रहती है। वरन् अनुकूल परिस्थितियो के निर्माण करने की क्षमताका भी विकास करती है। यह निर्माण 'सुखवाद' पर आधारित होता है यह निर्माण क्षमता ही शिक्षा है।

प्रस्तावना

'शिक्षा' एक अत्यधिक विवादास्पद विषय रहा है। व्यक्ति एवं समाज के सन्दर्भ मे इसे सदैव प्रशंसा अथवा दोष का भागी माना जाता रहा है। 'कैसी है और 'कैसी होनी चाहिये ने सदैव शिक्षा को विवादग्रस्त रखा है। इसके फलस्वरूप वर्तमान से असन्तुष्टि की स्थिति एक स्थाई स्थिति का रूप धारण करती जा रही है। इस स्थिति के लिए उत्तरदायी मुख्य रूप से शिक्षा के अर्थ मे समरूपता का न होन है। प्रत्येक विवादकर्त्ता इसके अर्थ को एक विभिन्न विशिष्ट प्रारूप मे देखता है क्यो कि आदिकाल से वर्तमान तक इसके अथो मे इतना परिवर्तन आया है कि इसकी अवधारणा एक भ्रामक रूप ले चुकी है। इस कारण शिक्षा की अवधारणा का एक स्पष्ट प्रारूप प्रस्तुत करना आवश्यक है।

शिक्षा का सर्वाधिक प्रयुक्त अर्थउस शिक्षण एवं शब्दक्षण प्रक्रिया से है जिसे विद्यालय मे प्रयुक्त किया जाता है। गत कुछ वर्षो से एक अन्य अर्थ भी प्रयोग मे आने लगा है जिसके अनुसार शिक्षा को निदेश एवं शब्दक्षण की कला अथवा विज्ञान अथवा दोनों के रूप मे देखा जाता है। विश्वविद्यालयो एवं शिक्षक शब्दक्षण विभागो मे इसी अर्थ के संदर्भ मे शिक्षा को लिया जाता है। उपरोक्त दृष्टिकोण स्पष्ट होते हुए भी कुछ संदर्भो मे भ्रामक है। परिणाम रूप मे विद्यालय मे व्यतीत समय, व्यवहार का परिमार्जित रूप, आदि दृष्टिकोणो से विश्लेषण करने पर शिक्षा के अधिक स्पष्ट रूप मे विकसित करने की आवश्यकता दृष्टिगत होती है। इसी प्रकार जिस वातावरण मे शिक्षा प्राप्त की एवं उस शिक्षा का प्रारूप साविधिक या अविधिक मे से कैसा है शिक्षा के अर्थ को भिन्नता देने के लिए उत्तरदायी हो जाता है। उपरोक्त के आधार पर यह अत्यन्त आवश्यका हो जाता है कि शिक्षा के अर्थ प्रकृति एवं क्षेत्र की उचित व स्पष्ट अवधारणा विकसित की जाये।

वस्तुतः मानव मृत्युपर्यन्त सीखता रहता है एवं उसी के आधार पर विकासोन्मुख होता है। विद्यालय तो इस विकास को एक निश्चित दिशा ही प्रदान करता है, परन्तु विद्यालयी शिक्षा तो शिक्षा के व्यापक रूप के अन्तर्गत ही आ जाती है। शिक्षा शब्द का प्रयोग तीन रूपो मे किया जाता है– ज्ञान के लिए, मानव के शारीरिक और मानसिक व्यवहार के परिवर्तन हेतु प्रक्रिया के लिए, और पाठ्यचर्या के एक विषय के लिए।

जहाँ शिक्षा शब्द का प्रयोग ज्ञान के लिए किया जाता है तो समस्त ब्रह्माण्ड उसका विषय क्षेत्र होता है। इस ब्रह्माण्ड का प्रत्येक तत्व उसका अंग होता है। इस रूप मे शिक्षा के अंगो की कोई सीमा नहीं होती

copyright@ijaer.org

शिक्षा शब्द का दूसरा प्रयोग मनुष्य के व्यवहार में परिवर्तन करने वाली प्रक्रिया के लिये होता है। इस रूप में भी उसका प्रयोग दो रूपों में होता है– व्यापक रूप में और संकुचित रूप में। व्यापक रूप में शिक्षा प्रक्रिया के तीन अंग होते है– शिक्षक, शिक्षार्थी एवं सामाजिक पर्यावरण। यह तीनों ही शैक्षिक तत्व या अंगों के रूप में समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं।

शिक्षा, विषय के रूप में शिक्षा शास्त्र कहलाता है। शिक्षा शास्त्र में शिक्षा प्रक्रिया के विभिन्न अंगों–शिक्षक, शिक्षार्थी, सामाजिक पर्यावरण और पाठ्यचर्या का विस्तृत अध्ययन किया जाता है।

शिक्षा का अर्थ व प्रकृति

सामान्य व्यक्ति के अनुसार– "सामान्य व्यक्ति शिक्षा को साक्षरता के पर्याय के रूप में लेते है।, जिसमें एक विशिष्ट व्यवहार की अपेक्षा निहित होती है। साथ ही रहन–सहन, बातचीत, वस्त्र विन्यास, भाषा आदि में नागरीय पुट का होना शिक्षा के लिए सामान्य व्यक्ति की दृष्टि में महत्त्वपूर्ण अनिवार्यता है।"

शिक्षा सामाजिक सन्दर्भ में–सामाजिक सन्दर्भ में शिक्षा का अर्थ एक ही आधार पर किया जा सकता है। व्यक्ति के श्रेयस को महत्त्व दिया जाये या समाज के श्रेयस को समाज के वृहद परिप्रेक्ष्य में शिक्षा की काया व्यष्टि तक नहीं समष्टि तक व्याप्त हो जाते हैं।

प्रत्येक समाज में, उसके विकास के लिये, विशेष विचाराधीन समय में एक शिक्षा प्रणाली होती है, जो व्यक्तियों पर अधिरोपित होती है। प्रत्येक समाज अपने सामने एक मानवीय आदर्श रखता है, कि किसी व्यक्ति को बौद्धिक, शारीरिक तथा नैतिक दृष्टियों से कैसा होना चाहिये। यह आदर्श शिक्षा का आधार होता है। समाज तभी जीवित रह सकता है, जब उसके सदस्यों में पर्याप्त एकरूपता हो। सामुदायिक जीवनयापन के लिये आवश्यक आधारभूत सम्बन्धों के संस्कार बालकों के मन में पैदा करके शिक्षा इस एकरूपता को सांतत्य प्रदान करती है और उसे सुदृढ़ बनाती है। शिक्षा के द्वारा 'व्यक्तिगत जीव' एक 'सामाजिक जीव' के रूप में परिवर्तित हो जाता है, किन्तु यह एकरूपता सापेक्ष ही होती है।

इस प्रकार शिक्षा वह क्रिया है, जो उन पीढ़ियों के प्रति की जाती है, जो अभी सामाजिक जीवन के लिये तैयार नहीं है। उसका प्रयोजन बच्चों में कुछ शारीरिक, बौद्धिक और नैतिक अवस्थाएँ उत्पन्न करना और विकसित करना है, जिनकी राजनैतिक समाज अपेक्षा करता है, उपरोक्त दृष्टिकोण से यह निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षा में युवा पीढ़ी का सुव्यवस्थित समाजीकरण निहित है।

स्वामी विवेकानन्द एवं महात्मा गाँधी जी की शैक्षिक विचारधारा

विचार मनुष्य और समाज की अन्तर्निहित भावनाओं को अभिव्यक्ति देने के साथ–साथ संस्कृति व सभ्यता के रूप में मुखर होते हैं। जिस देश के पास विचार की सामर्थ्य जितनी अधिक होती है, उसकी संस्कृति उतनी ही अक्षुण्य होती है। भारत की सम्पूर्ण ऐतिहासिक एवं शैक्षिक उपलब्धियाँ इसी प्रकार से अनुप्रेरित संस्कृति के मूल में निहित रहीं। इस महान देश का सांस्कृतिक कलेवर इसे पदार्थ के भौतिक मोह से मुक्त करके आत्मा के सामीप्य को सहेजने का कारण बना है। यही कारण है कि प्रत्येक युग में यह देश के विश्व के लिये दिशाप्रेरक और महान संजीवनी शक्ति के रूप में मुखरित रहा है। इतिहास के सभी पृष्ठों पर

जिस गौरवमयी गाथा को अंकित कर यह देश जीवन के लिये संघर्ष करता रहा, उसका सिंहावलोकन करना सम्पूर्ण शिक्षा जगत के लिये उपयोगी ही नहीं वरन् आवश्यक भी है।

प्रत्येक राष्ट्र को समाज सुधार की भावनाओं से परिपूर्ण व्यक्ति ही अपने विचारों से नया जीवन व नया चिन्तन दिया करते हैं। ऐसे व्यक्ति समाज व राष्ट्र के सम्मुख एक नवीन आदर्श प्रस्तुत करते हैं, जिससे भावी पीढ़ी को निराशा का मुँह नहीं देखना पड़ता और उन्हें दिशा निर्देश प्राप्त होता है। इतिहास के ये अमर व्यक्तित्व अपने स्वर्णिम विचारों को सम्पूर्ण जनता को समर्पित करते हैं जिनसे मानव पीढ़ी वस्तुतः कृत–कृत्य हो जाती है। ऐसे ही व्यक्तियों में नाम आता है युगपुरुष, योग्यतम प्रतिभाओं के पुंज, भारत की आध्यात्मिक चेतना के महानायक और हिन्दूधर्म के पुनर्प्रतिष्ठापक स्वामी विवेकानन्द और मानवतावादी, सत्य, अहिंसा के पुजारी–राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का।

प्रारम्भ से ही इन दोनों महानुभावों ने भारत की निरीह जनता को अंग्रेज दरिन्दों के हाथों घोर यातना सहते देखा था। भारत एक निरीह अबला की भाँति चीखें मार रहा था। उस सन्तृप्त मानवता के कल्याण के निमित्त स्वामी विवेकानन्द, श्री अरविन्द, रवीन्द्रनाथ टैगोर और गाँधी जी के सम्मुख कुछ प्रश्न चिन्ह लगे कि भारतीय चिन्तन को कैसे प्रभावित किया जाये जिससे यहाँ का जनमानस अपना खोया हुआ आत्मगौरव पुनः प्राप्त कर ले।1 देश के गौरवशाली इतिहास को समझने व अनुकरण करने की शक्ति प्राप्त करे तथा अपनी संस्कृति एवं मान्यताओं के प्रति आदर व्यक्त करे। इन शिक्षा शास्त्रियों एवं दार्शनिकों ने शैक्षणिक विचारधारा में अपना महत्वपूर्ण अंशदान किया है।

इन महापुरुषों के शैक्षिक विचारों ने भारत–भारती को अपने उज्जवल रूप को बनाये रखने का संदेश दिया है, जिससे प्रबुद्ध होकर समस्त मानव जाति उस सर्वसमर्थ जीवन को प्राप्त कर सके,1 जिसके लिये वह बहुत दिनों से तरस रही है। इन लोगों ने अपने शैक्षिक विचारों को समस्त जगत के सम्मुख उसी प्रकार विकीर्ण किया है जिस प्रकार सूर्य उज्जवल प्रभा को अपनी गौरवमयी किरणों के द्वारा फैलाकर जगत को ज्योति देने में समर्थ होता है। इन्होंने अपने ज्ञान, उत्साह, साहस व अमृतमयी वाणी को ज्योतिर्मयी किरण से इस देश में नवीन चेतना को जन्म दिया है व नई आशाओं तथा विश्वासों को समर्पण कर भारतीय जन मानस को कृत्य–कृत्य किया है। इन शिक्षाशास्त्रियों के शैक्षिक–दर्शन ने दिव्यता का प्रकाश सार्वभौम, सर्वयुगीन, आध्यात्म प्रेरणा, सर्वैक्य भावना से परिपूर्ण लोकोद्धार तथा विज्ञान एवं हस्तकौशल को प्रोत्साहन दिया था। राष्ट्रीय पराभव से दुःखी इन सभी ने तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था को अंधकार के गहवर से खींचकर उसको अपने शैक्षिक दर्शन के प्रकाशपुंज के द्वारा सही दिशा दिखाई। इन महापुरुषों ने आर्थिक रूप से शक्तिहीन एवं सांस्कृतिक रूप से किंकर्तव्यविमूढ़ भारत की धमनियों में प्राण का नवसंचार किया था। तत्कालीन भारतीय जनजीवन एवं विचार जगत की दीर्घ रजनी समाप्त करने एवं मृतप्राय शरीर के शिथिलप्राय अस्थिमास तक में नवजीवन का संचार करने वाले अमर पुत्रों स्वामी विवेकानन्दएवं गाँधी जी के ओजमयी वाणी द्वारा न केवल भारत वरन् पश्चिमी देश भी प्रभावित हुये हैं। जब मातृभूमि की आकाशगंगा में ये सितारे चमके तब वह समय सदियों पुराने इस देश के इतिहास का सर्वाधिक त्रिमिराछन्न काल था। इन लोगों को देश की परिस्थितियों का सम्पूर्ण चित्र अपनी आंखों के सामने दुःखद दिखाई दिया था। इन्होंने अनुभव किया कि राष्ट्र के निर्माण में शिक्षा

तो आवश्यक है ही साथ में मात्र चुने हुये व्यक्तियों को शिक्षा न मिलकर, विभिन्न वर्गों को प्राप्त होनी चाहिये। शिक्षा में परिवर्तन एवं सम्पूर्ण पक्षों पर विचार किये बिना समाज व देश का कल्याण सम्भव नहीं। इन लोगों का यह विचार था कि यदि भारत में शैक्षिक गतिमयता आ जाये तो वह पुनः प्रकाशमान होकर एक जाज्वल्यमान हीरे की भांति चमकने लगेगा।

दोनों महापुरुषों का शैक्षिक दर्शन शोधार्थी को इसलिये प्रभावपूर्ण प्रतीत हुआ क्योंकि इनका जीवन दर्शन भी उच्चतम उपलब्धियों से अनुप्राणित था। ये दोनों महापुरुष अपने जीवन–दर्शन के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्षों में एक सामंजस्य बनाकर चलते थे। इनका दर्शन वैयक्तिक उपलब्धियों की सीमा से उन्मुक्त था, इसीलिये इन लोगों ने सामान्य मानव में ईश्वर व परमसत्ता के दर्शन किये। इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में जो अतुलनीय कार्य किए, उनके लिये सम्पूर्ण शिक्षा जगत इनका सदैव ऋणी रहेगा। इन सभी ने अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में मानवजाति को बलवान बनने का उपदेश दिया था। इन महापुरुषों से पूर्ण भारत की महान ज्ञान परम्परा एक सीमा में आबद्ध थी। उसकी प्रगति अंग्रेजों के मोह जाल, पण्डितों के तर्क–कौशल और वाक–चातुर्य में फँस गयी थी। परन्तु उन्होंने उस अलौकिक ज्ञान को जनता–जनार्दन के समक्ष जनसाधारण की भाषा में प्रस्तुत किया था। जिस युग में गाँधी एवं विवेकानन्द का अवतरण हुआ, उस समय समस्त संसार में ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति करने की होड़ लगी हुयी थी। एक ओर जहाँ विज्ञान जगत में अनेक आश्चर्यजनक आविष्कार हुये, वहीं दूसरी ओर धर्म और दर्शन के क्षेत्र में चतुर्मुखी विकास करने की सम्भावनायें बन गयीं।

स्वामी विवेकानन्द और गाँधी जी का शैक्षिक दर्शन पारस पत्थर की भांति है, मृग की नाभि में स्थित कस्तूरी के सदृश्य है जिस प्रकार किसी के पास पारस होते हुये भी दर–दर की ठोकरें खाता फिरे, कस्तूरी की उपस्थिति नाभि में होने पर भी मृग उसकी सुगन्ध को ढूंढ़ता फिरे तो हास्यास्पद होने के साथ–साथ उसकी अज्ञानता का भी द्योतक है, ठीक यही दशा वर्तमान शिक्षा नवनिहालों की भी है, वे दिग्भ्रमित हैं।

स्वामी विवेकानन्द और गाँधी जी जैसे शिक्षाशस्त्रियों, दार्शनिकों एवं विद्वानों के शैक्षिक विचारों के होते हुये भी शैक्षिक विधियों के पीछे दौड़ रहे हैं, लेकिन कार्य सफल न होने पर मन मसोस कर रह जाते हैं। ये सभी महापुरुष ताजी हवा के उस प्रबल प्रवाह की भांति थे, जिन्होंने भारतीयता को पूरी तरह से विस्तृत होना एवं साँस लेना सिखाया, रोशनी की उस किरण के सदृश्य थे जिसने बहुत सी चीजों को वस्तुतः शिक्षा की तहों को उलट–पलट कर दिया था। इनके शैक्षिक विचारों ने आग के गोले की भांति सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था को तपाया था तथा तपाकर एक दिव्य ज्योति प्रदान की थी।

समकालीन भारतीय शिक्षा–दार्शनिकों में महात्मा गाँधी के शिक्षा–सम्बन्धी विचारों का उनके जीवन काल में जितना अधिक प्रचार हुआ, उतना अधिक प्रचार किसी भी अन्य समकालीन भारतीय शिक्षा–दार्शनिक के विचारों का नहीं हुआ। इसका एक बड़ा कारण यह था कि गाँधी जी देश के सर्वोच्च नेता माने जाते थे और जनता में उनके विचारों का बड़ा मान था। देश को स्वतन्त्रता मिल जाने के बाद स्वतन्त्र भारत की सरकार ने गाँधी जी के शिक्षा सम्बन्धी विचारों को कार्य रूप में परिणत करने के लिए बहुत कुछ प्रयत्न किये, अनेक बार शिक्षाशास्त्रियों ने मिल–बैठ कर गाँधी जी के विचारों पर वाद–विवाद किया और उनको

व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया। चूंकि भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में गाँधी जी के अद्वितीय योगदान के कारण उनका सम्मान बना हुआ है और बना रहेगा। इसलिये आज भी शिक्षा के क्षेत्र में उनके विचारों पर विशेष ध्यान दिया जाता है।''

मोहनदास कर्मचन्द गाँधी परम्परागत अर्थों में दार्शनिक नहीं थे, किन्तु उन्होंने दर्शन की सभी समस्याओं पर गम्भीर विचार किया है। अस्तु, अनेक विद्वानों ने उनके शैक्षिक–दार्शनिक विचारों को व्यवस्थित किया है और उनका मूल्यांकन करने का प्रयास किया है। दर्शन के क्षेत्र में गाँधी जी का विशेष अध्ययन भी नहीं था, हाँ उन्होंने विभिन्न धर्मों के प्रमुख धर्म ग्रन्थों का अध्ययन अवश्य किया था। अस्तु उनका दर्शन एक प्रकार से धार्मिक दर्शन कहा जा सकता है। भगवद्गीता और उपनिषदों का उन पर विशेष प्रभाव पड़ा। इसलिये उनका दर्शन नव्य वेदान्त दर्शन कहा जा सकता है।

समकालीन भारत में अंग्रेजों द्वारा चलायी हुई शिक्षा प्रणाली के विरुद्ध विद्रोह करके राष्ट्रीय शिक्षा–प्रणाली की स्थापना का बीड़ा उठाने वाले दार्शनिकों में स्वामी विवेकानन्द का नाम प्रमुख है। गाँधी और अरविन्द के समान उन्होंने भारत पर पाश्चात्य शिक्षा–प्रणाली लागू करने का विरोध किया और भारत की संस्कृति के अनुरूप शिक्षा–प्रणाली अपनाने का समर्थन किया।2

विवेकानन्द रामकृष्ण के शिष्य थे। रामकृष्ण वेदान्त की परम्परा को मानने वाले सन्त थे। वेदान्त का मूल सिद्धान्त है कि एक ही ब्रह्म सब जगह भिन्न–2 रूपों में दिखाई पड़ता है। अस्तु, रामकृष्ण ने अपने उद्देश्यों में सभी धर्मों की एकता पर जोर दिया। उनके इसी उपदेश को विवेकानन्द ने दूर–दूर तक फैलाया। एक ओर जहाँ विवेकानन्द पर प्राचीन भारतीय वेदान्त–दर्शन का प्रभाव था, वहीं दूसरी और वे पाश्चात्य वैज्ञानिक प्रगति से भी कम प्रभावित न थे। इसलिये उन्होंने कोरे निवृत्तिवाद का खण्डन किया है और प्रवृत्ति तथा निवृत्ति का समन्वय करने का प्रयास किया है। वे मोक्ष को जीवन का लक्ष्य मानते हुए भी इस लोक में प्रवृत्ति की अवहेलना नहीं करते हैं।3

आधुनिक युग में मानवता एक ऐसे स्थान पर आकर खड़ी है जहाँ से उसे जीवन के विकास प्रांगण में वैज्ञानिक उपलब्धियों के विघटनकारी तत्वों की विनाशलीला का दृश्य दिखायी पड़ रहा है। जीवन के मूल्यों में प्रभावकारी परिवर्तन के कारण बाहरी परिवेश में असामंजस्य की स्थिति दिखाई पड़ रही है। भौतिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों के अदृश्यमान प्रतिशोध से उत्पन्न होने वाली विषमतायें दिखायी पड़ रही हैं। वैयक्तिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा जीवन की अन्य क्षेत्रों की आवश्यकताओं के बीच प्रतिद्वन्दिता दिखाई पड़ रही है, वर्तमान शिक्षा जगत पर धुन्ध सी छायी हुयी है, सर्वत्र अज्ञानता अशिक्षा दिखाई पड़ रही है, साथ ही साथ उसे दिखाई पड़ रही है एक दिव्य ज्योति की झलक जो अपने विकासोन्मुख दैदीव्यमान आभा से जीवन के विघटनकारी और असामंजस्य पूर्ण तत्वों को आच्छादित कर देगी। विचार मनुष्य और समाज की अन्तर्निहित भावनाओं को अभिव्यक्ति देने के साथ–साथ संस्कृति व सभ्यता के रूप में मुखर होते हैं। जिस देश के पास विचार की सामर्थ्य जितनी अधिक होती है, उसकी संस्कृति उतनी ही अक्षुण्य होती है। भारत की सम्पूर्ण ऐतिहासिक एवं शैक्षिक उपलब्धियाँ इसी प्रकार से अनुप्रेरित संस्कृति के मूल में निहित रहीं। इस महान देश का सांस्कृतिक कलेवर इसे पदार्थ के भौतिक मोह से मुक्त करके आत्मा के सामीप्य को

सहेजने का कारण बना है।

यही कारण है कि प्रत्येक युग में यह देश के विश्व के लिये दिशाप्रेरक और महान संजीवनी शक्ति के रूप में मुखरित रहा है। इतिहास के सभी पृष्ठों पर जिस गौरवमयी गाथा को अंकित कर यह देश जीवन के लिये संघर्ष करता रहा, उसका सिंहावलोकन करना सम्पूर्ण शिक्षा जगत के लिये उपयोगी ही नहीं वरन् आवश्यक भी है।

पुनर्जागरण की आँधी का प्रथम वेग इतना अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुआ कि भारतीय युवा वर्ग को प्राचीन हिन्दू धर्म से अनास्था हो गयी और वह ईसाइयत की तरफ मुड़ने लगा, साथ ही अपनी मूलभूत परम्पराओं, आदर्शों को ढोंग बताने लगा। आवश्यकता इस बात की थी कि इन युवाओं को भारतीय–दर्शन के मूल तत्वों से परिचित कराया जाता।

गणतंत्र भारत की आधार–शिक्षा को सुदृढ़ बनाने के लिये ऐसे कर्तव्यनिष्ठ, अनुशासित एवं चिन्तनशील नागरिकों की आवश्यकता है जिनका नैतिक चरित्र ऊँचा हो, जिनमें उत्तरदायित्व वहन करने की शक्ति हो तथा जिनमें देश और राष्ट्र के प्रति पूर्ण आस्था हो। राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक, नैतिक तथा सांस्कृतिक उन्नयन के लिये आज हम भारतीयों को आत्मानुशासित होकर अपने आचार–विचार में समन्वय स्थापित करते हुये अपने चरित्र और व्यक्तित्व को विशेष रूप से प्रस्फुटित करते हुए उद्भासित करना है। इन उद्देश्यों की पूर्ति तभी होगी जब देश की नयी पीढ़ी का चतुर्मुखी विकास होगा, परन्तु इस विकास के लिये श्रेष्ठ कोटि की शिक्षा की व्यवस्था करनी पड़ेगी। इसके लिये यह आवश्यक है कि हम भारतीय शिक्षा–मनीषियों के शैक्षिक विचारों तथा शैक्षिक दर्शन को जानें तथा परिस्थितियों के अनुरूप उनका अनुसरण करें। उनके जो विचार देश, काल तथा परिस्थिति के अनुकूल हों, उनको अपनायें और अपना मार्ग प्रशस्त करें। श्रेष्ठ कोटि की शिक्षा ही भारतीय जन–जीवन की उन्नति का स्रोत है। उसके अभाव में प्रगति सम्भव नहीं। शिक्षा राष्ट्रीय जीवन की आधारशिला है। इस सम्बन्ध में विवेकानन्द जी के विचार उल्लेखनीय हैं।

निष्कर्ष–

देश उसी अनुपात में उन्नति करता है जिस अनुपात में वहाँ के जन–समूह में शिक्षा का प्रसार होता है। इन महापुरुषों का शैक्षिक दर्शन शोधार्थी को इसलिये प्रभावपूर्ण प्रतीत हुआ क्योंकि इनका जीवन दर्शन भी उच्चतम उपलब्धियों से अनुप्राणित था। ये दोनों महापुरुष अपने जीवन–दर्शन के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्षों में एक सामंजस्य बनाकर चलते थे। इनका दर्शन वैयक्तिक उपलब्धियों की सीमा से उन्मुक्त था, इसीलिये इन लोगों ने सामान्य मानव में ईश्वर व परमसत्ता के दर्शन किये। इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में जो अतुलनीय कार्य किए, उनके लिये सम्पूर्ण शिक्षा जगत इनका सदैव ऋणी रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- खान, महमूद अहमद (2015) : पर्सनाल्टी प्रोफाइल, इमोशनल मैच्योरिटी एण्ड पैरेन्टल एक्सेप्टेन्श, रिजेक्शन ऑफ चिल्ड्रेन ऑफ वर्किंग एण्ड नॉन वर्किंग मदर्स, शोध प्रबन्ध, डिपार्टमेन्ट ऑफ एजुकेशन, यूनिवर्सिटी ऑफ काश्मीर।
- लक्ष्मी, आर0 (2000) : ह्युमनिज्म ऑफ विवेकानन्द, समरिफलेशन्स, डाक्टरोल थीसिस, डिपार्टमेन्ट ऑफ फिलासफी, यूनिवर्सिटी ऑफ केरला।

- लाल एवं शर्मा (2011) : भारतीय शिक्षा का इतिहास विकास एवं समस्याएँ, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ।
- मारकस एवं अन्य (2011) : द एसोसिएशन बिटविन लो सोशियो इकोनोमिक स्टेट्स एण्ड डिप्रेसिव सिम्पट्म्स ऑन टेम्परामेन्ट एण्ड पर्सनाल्टी ट्रेटस, पर्सनाल्टी एण्ड इण्डी विजुअल डिफ्रेन्सेस, 51, पेज–302–308।
- मरगाड, अर्चना जी (2012) : पर्सनाल्टी डेवलपमेन्ट इन द भागवत गीताए क्रिटिकल स्टडी, शोध प्रबन्ध, डिपार्टमेन्ट ऑफ संस्कृत, कर्नाटक यूनिवर्सिटी कर्नाटक।
- मिश्रा (2009) : शिक्षा का समाजशास्त्र न्यू कैलाश प्रकाशन इलाहाबाद।
- मित्तल (2012) : शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार, डॉर्लिग किंडरस्ले (इंडिया) नोएडा।
- मूर्ति, ए0 श्रीनिवास (2012) : पर्सनाल्टी ऑफ एडोलसेन्स इन रिलेशन टू दियर एडजस्टमेन्ट एण्ड डिसीजन मेंकिंग, शोध प्रबन्ध, डिपार्टमेन्ट ऑफ एजुकेशन, आचार्य नागार्जुन विश्वविद्यालय, आंध्र प्रदेश।
- नायर, वी0 (1980) : एजुकेशनल आइडियाज ऑफ स्वामी विवेकानन्द, शोध प्रबन्ध, यूनिवर्सिटी ऑफ केरला।
- नेविदिता, लेसराम (2008) : द इम्पैक्ट ऑफ फेमिली इन्वायरमेन्ट ऑफ द पर्सनाल्टी डेवलपमेन्ट ऑफ अ चाइल्ड, शोध प्रबन्ध, डिपार्टमेन्ट ऑफ एजुकेशन, मणिपुर यूनिवर्सिटी, मणिपुर।
- निखिलानन्द, स्वामी (2016) : विवेकानन्द एक जीवनी, अद्वैत आश्रम, कोलकाता।
- निर्वेदानन्द, स्वामी (2001) : हमारी शिक्षा, रामकृष्ण मठ, नागपुर।
- निशंक (2016) : संसार कायरों के लिए नही स्वामी विवेकानन्द का जीवन प्रबन्धन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
- ओड़, एल0के0 (2008) : शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।